Pre Requisite of the Birth of Buddhism in India - Socio - Religious Condition of India

Dr. Dilip Kumar
Assistant Professor (Guest)
Dept. of Ancient Indian History & Archaeology,
Patna University, Patna
Paper – 104 (2), History of Indian Buddhism, Sem. – IV

प्रारंभिक बौद्धों की सामाजिक पृष्टभूमि :-

बौद्ध धर्म ब्राह्मणवाद के खिलाफ था यह इसलिए मान लिया जाता है कि ब्राह्मणों से त्रस्त दलित जातियों और ब्राह्मणों से स्पर्धा करने वाले क्षत्रिय या व्यापारी वर्गों ने बौद्धमत को भारी मात्रा में समर्थन दिया होगा। यह भी मान लिया जाता है कि ब्राह्मण इस नई विचारधारा से दूर रहे। क्या वास्तव में बुद्ध के अनुयायियों में दलित सर्वाधिक थे? क्या ब्राह्मणों से उन्हें कोई समर्थन नहीं मिला? चलिए बौद्ध ग्रंथों से उजागर होने वाले कुछ आश्चर्यजनक तथ्यों का सामना करें। उस समय के समाज में वैचारिक परिवर्तन के नए आयाम समझें।

बौद्धधर्म का समाज के कुछ खास वर्गों के साथ कैसा संबंध था, इस विषय पर विभिन्न मत प्रचलित हैं, जो ठोस मौलिक सामग्री के अभाव में ज़्यादातर आम धारणाएं मात्र नज़र आती हैं। इनमें से कुछ सामान्य धारणाएं या तो बौद्ध मूल ग्रंथों के सतही सर्वेक्षण के आधार पर बना ली गईं, जिनमें वर्णित कुछ नाम पाठकों की नज़र में चढ़ गए। या कुछ धारणाएं इसलिए बनी क्योंकि लोगों ने ग्रंथों का काले-क्रमानुसार स्तरीकरण करके बात समझने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया, और सारे बौद्ध साहित्य को एक समरूप इकाई मान लिया।

इसी संदर्भ में रिस डेविड्स और बी. जी. गोखले के विश्लेषण उन साक्ष्यों पर आधारित हैं जो अपेक्षाकृत बहुत बाद में, पांचवी सदी ईस्वी यानी बुद्ध के 900 साल बाद, लिखे गए 'भाष्य' में मिलते हैं। अतः उनमें कुछ गंभीर दोष आ गए हैं। भाष्य में लोगों के वर्गीकरण पर अनेक कारणों से भरोसा नहीं किया जा सकता। जिस काल में 'भाष्य' लिखे गए उस समय तक बौद्ध धर्म के प्रारंभिक पाली ग्रंथों में दिए गए कई वर्गों का अर्थ बदल चुका था। जैसे प्रारंभिक पाली ग्रंथों में उल्लेखित अनेक 'गहपति' (गृहपति), भाष्ये और जातक के लिखे जाने तक सेट्ठि (श्रेष्ठि) में परिवर्तित हो गए।

बुद्ध काल में अर्थव्यवस्था और समाज:

<u>अर्थव्यवस्था</u> :-

700 ई.पू. के आस-पास उत्तर प्रदेश एवं बिहार की जनता की स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। पाणिनी की अष्टध्यायी और सुतनिपात के अनुसार, खेत की दो या तीन बार जुताई होती थी। धान की रोपाई और लोहे के उपकरणों के ज्ञान ने कृषि उत्पादन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया। चावल उत्पादक मध्य गंगा घाटी में, गेहूँ उत्पादक ऊपरी गंगा घाटी की तुलना में अधिक उत्पादन होता था। उत्पादन अधिशेष से जनसंख्या वृद्धि संभव हुई। इसके अतिरिक्त उत्पादन में यज्ञ पर खर्च करने की प्रवृत्ति कम हो गई। सांख्यान गृह सूत्र में बैल द्वारा खेती करने, हल चलाने एवं मंत्रों के साथ समस्त कृषि प्रक्रिया को आगे बढ़ाने का उल्लेख है। पाणिनी के समय खेतों का सर्वेक्षण करने वाले अधिकारी को क्षेत्रकार कहा जाता था। बौधायन के अनुसार, छः निवर्तन भूमि की उपज से एक परिवार का भरण-पोषण होता था। अतः इससे ज्ञात होता है कि भूमि-माप की इकाई निवर्तन कहलाती थी और एक निवर्तन डेढ़ एकड़ के बराबर होती थी।

<u>फसल</u> - सूत्र ग्रंथों में दो प्रकार के जौ- यव और यवानी, पाँच प्रकार के चावलों (कृष्ण ब्रिही, महाब्रीही, हायन, यवक और पष्टिक) का उल्लेख है। बौद्ध ग्रन्थों में ईख की खेती की चर्चा की गई है। प्राचीन बौद्ध एवं जैन साहित्य में शलिल (चावल) के 4 किस्मों की चर्चा की गई है (रक्त शलि, कालम शलि, गंधशलि, महाशलि)। प्राचीन बौद्ध साहित्य में खेत पति, खेत स्वामी या वथूपति की चर्चा की गई है। इसका अर्थ है-भूमि के अलग-अलग स्वामी होते थे। इससे यह संकेत मिलता है, भू व्यक्तिगत स्वामित्व की भावना विकसित हो। चुकी थी। कृषि में भी बड़े-बड़े फामों का विकास हुआ। माना जाता है कि 500 हलों से खेती की जाती थी। अब बौद्ध ग्रंथों के अनुसार कृषि में दासों, कर्मकारों एवं पस्सों को लगाया जाता था।

<u>गृहपति</u> - वैदिक युग में याजक (यज्ञ करने वाला) और पशुचारक थे किन्तु छठी सदी ईपू. में वे पहली बार विशाल पितृसत्तात्मक परिवार का मुखिया बन गए। उन्हें धन के कारण सम्मान प्राप्त हुआ। गृहपति मेंडक राज्य की सेना को वेतन देता था और बुद्ध संघ की सेवा के लिए उसने1250 गौ सेवकों को नियुक्त किया था। उसी तरह अनाथपिंडक संपन्न गृहपति था।

शिल्प - इस काल में राजगृह में 18 प्रकार के शिल्पों की चर्चा की गयी है। शिल्पों का केवल विशिष्टीकरण हुआ शिल्पों का क्षेत्रीयकारण भी हुआ। वैशाली के सदलपट में कुंभकार की500 दुकाने थीं। जिलाहों की भी अलग-अलग बस्तियां थीं जुलाहों का वार्ड तंतु बायधान कहलाता था। हठी दांत का काम करने वाले दंतकारवीथि कहलाते थे। रंगरेजों का कार्य करने वाले रंगरेजकार विथि कहलाते थे। यह काल उत्तरी काले पॉलिशदार मृदभांड चरण से जुड़ा हुआ था। इसी काल में 300 ई.पू. के आस-पास घेरेदार कुएं एवं पक्के ईंटों का प्रयोग होने लगा। धातु के आहत सिक्के का प्रथम प्रयोग 500 ई.पू. के आस-पास हुआ। आरंभ में आहत सिक्के चांदी के बनाये जाते थे किन्तु तांबे के भी होते थे। पंचमार्क सिक्के में धातु के टुकड़ों पर हाथी, मछली, सांड, अर्द्धचद्र की आकृतियाँ बनाई जाती थीं। ये पूर्वी उत्तर प्रदेश, मगध और तक्षशिला में विशेष रूप से पाए गए हैं। कुछ अन्य सिक्कों की भी चर्चा हुई है यथा कर्षापण, पाद, माशक, काकणिक, सुर्वण (निष्क)। बिम्बिसार और अजातशत्रु के काल में राजगृह में पाँच मास एक पाद के बराबर होता था। पाणिनी के काल में निम्नलिखित सिक्के चलते थे-निष्क, पण, पाद, मास, शान (तांबा का एक सिक्का)।

व्यवसायिक संगठन - श्रेणियों के पदाधिकारियों को चौधरी (प्रमुख) और जेठक (ज्येष्ठक) और भाण्डागारिक कहा जाता था। बिना श्रेणियों के संगठित उद्योगों का संचालन ज्येष्ठक करते थे। व्यापार प्रमुख या मुखिया 'महासेठी' कहलाता था। कारवाँ (व्यापारियों का काफिला) सितारों और कौए की सहायता से थलनिय्याम के नेतृत्व में चलता था। बुद्ध काल में आर्थिक संघों को बहुत स्वायत्तता प्राप्त थी। वे वस्तुओं के मूल्य निश्चित करते थे। निजी सदस्यों पर गहरी पकड़ थी और इसके लिए उन्हें राज्य की ओर से भी मान्यता प्रदान की गई थी। वे भ्रष्ट सदस्यों का निष्कासन कर सकते थे। किसी भी स्त्री को बौद्ध संघ की सदस्यता के लिए, अपने पति के अतिरिक्त पति के संघ की अनुमति भी लेनी पड़ती थी। प्रारंभिक धर्म सूत्रों में ऋणों पर ब्याज 1¼ प्रतिशत प्रतिमास (15 प्रतिशत वार्षिक) था। वाणिज्य व्यापार विकसित अवस्था में था। एक मार्ग तामलिप्ति से पाटलिपुत्र एवं श्रावस्ती के माध्यम से उज्जैन होते हुए भड़ौंच से जुड़ता था। दूसरा मार्ग मथुरा-राजस्थान-तक्षशिला से जुड़ा था। व्यापार की वृद्धि के लिए पांडय सिद्धि संस्कार किया जाता था। इसमें सोम की पूजा की जाती थी।

नगरों का विकास - बुद्ध काल को द्वितीय नगरीकरण का काल भी कहा जाता है। प्रथम नगरीकरण सिन्धु घाटी सभ्यता के दौरान हुआ था। तैतरीय अरण्यक में पहली बार नगर की चर्चा

की गई है। उस काल में कुल 60 नगर थे जिनमें श्रावस्ती जैसे 20 नगर थे। बुद्ध काल में 6 बड़े नगर या महानगर थे यथा, राजगृह, चंपा, काशी, श्रावस्ती, साकेत, कौशांबी।

समाज :-

इस कल की सामाजिक जानकारी हमें ब्राह्मण साहित्यों से मिलती है। उपनिषदों के पश्चात् ब्राहमण साहित्य का एक बड़ा भाग सूत्र के रूप में लिखा गया। सूत्रसाहित्य की रचना बौद्ध धर्म के प्रचार का मुकाबला करने के लिए हुआ था। सूत्र साहित्य में कल्प सूत्र का विशेष महत्त्व है। कल्प सूत्र तीन भागों में विभाजित है- स्रौत सूत्र, गह्य सूत्र और धर्म सूत्र। आगे सूत्रों की ही भांति स्मृतियों में भी सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्था का प्रतिपादन हुआ। फिर भी दोनों में अन्तर है। सूत्र साहित्य गद्य और पद्य दोनों में है जबकि स्मृति साहित्य केवल पद्य में है। सूत्र और स्मृति साहित्य मिलकर शास्त्र कहे जाते हैं। गौतम धर्मसूत्र सबसे प्राचीन माना जाता है। प्रारंभ में गौतम, बौधायन, वशिष्ठ एवं अपास्तम्ब के धर्मसूत्र लिखे गए। गौतम एवं वशिष्ठ उत्तर भारत के हैं जबकि बौधायन एवं अपास्तम्ब दक्षिण भारत के। कतिपय मुद्दों पर इन सूत्रकारों के बीच भी मतभेद है। उदाहरण के लिए गौतम एंव बौधायन आठ प्रकार के विवाहों की चर्चा करता है जबकि अपास्तम्ब के सूत्र केवल छः प्रकार के विवाहों का जिक्र करते है। उसी तरह बौधायन उत्तराधिकार में बड़ा पुत्र को एक बडे अंग दिया जाने का हिमायत करता है जबकि अपास्तम्ब इस तथ्य को स्वीकार नहीं करता है। इसी प्रकार गौतम ब्राह्मण को विशिष्ट स्थिति में ब्याज पर धन देने का अधिकार देता है अर्थात् अगर वह किसी मध्यस्थ के माध्यम से किया जाय। फिर वह ब्राह्मण को कृषि एंव वाणिज्य व्यापार करने का अधिकार देता है। दूसरी तरफ बौधायन महत्वपूर्ण गतिविधि समुद्रयात्रा की निन्दा करता है तथा उसें अधर्म करार देता है। इस काल में वर्ण व्यवस्था का जन्म हो गया। समाज का कबिलाई ढाँचा टूट गया और सूत्र साहित्य के द्वारा जाति पर आधारित समाज को नियमबद्ध करने की कोशिश की गई।

<u>ब्राह्मण</u> - यज्ञ की प्रतिष्ठा के साथ समाज में ब्राह्मणों का दर्जा सर्वश्रेष्ठ हो गया। महात्मा बुद्ध ने ब्राह्मणों को 5 वर्गों में विभाजित किया है-

1. ब्रह्म समां (ब्रह्मा के समान)
2. देव समां (देवताओं के समान)
3. मर्यादा- (जो अपने जातीय गौरव का पालन कर रहा हो)
4. सभिन्न मर्यादा- (जो अपनी जातीय मर्यादा से च्युत हो चुका है)

5. ब्राह्मण चण्डाल- वह ब्राह्मण जो चाण्डाल के समान हो।

राजा अन्य वर्णों का शासक था परन्तु ब्राह्मण वर्ग का नहीं। ब्राह्मणों को किसी प्रकार का शारीरिक दंड नहीं दिया जाता था और वे कर से भी मुक्त होते थे। एक ही अपराध के लिए चारों वर्णों को अलग-अलग सजाएँ निर्धारित की गयी थीं। ब्राह्मणों को सबसे कम एवं शूद्रों को सबसे अधिक सजा मिलती थी। उसी तरह ब्याज की राशि भी अलग-अलग लगती थी। क्षत्रिय वर्ण की प्रतिष्ठा अब इसलिए बढ़ गई थी कि अब लोहे के उपकरण युद्धास्त्रों के रूप में प्रयुक्त होने लगे थे। उसी तरह कृषि उपकरण और उत्पादन में विकास से वैश्य वर्ण की आर्थिक क्षमता भी बढ़ गई और बड़े-बड़े गृहपति अस्तित्व में आए।

<u>शूद्र की स्थिति</u> - गौतम ने शूद्र को अनार्य कहा है। पाणिनी ने शूद्रों को दो वर्गों में विभाजित किया है, (1) अनिर्वासित (अवहिष्कृत) और (2) निर्वासित (बहिष्कृत)। ब्राह्मण शूद्रों का स्पर्श किया हुआ भोजन नहीं करते थे। द्विजों शूद्रों के साथ भोजन और विवाह निषिद्ध था। किन्तु ऐतिहासिक स्रोतों से चलता है कि शूद्रों को इस काल में अंत्येष्टी में अग्नि में आहुति देने का अधिकार था। सांख्यान स्रौत सूत्र के अनुसार, शूद्र भी ओदन एवं महाव्रत नामक संस्कार में तीन अन्य वर्णों के साथ भाग ले सकता था। अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह के आधार पर जाति का निर्धारण सबसे पहले बौधायन ने किया। प्रारंभिक बौद्ध ग्रन्थों में हीनसीप्प शब्द का (निम्न जातियों के लिए) प्रयोग हुआ है। इनमें प्राय: 5 हीन जातियों का उल्लेख हुआ है- चांडाल, निषाद, वेण, रथकार, पुक्कुस। बुद्ध और महावीर जन्म से जाति के समर्थक नहीं थे बल्कि कर्म पर आधारित जाति व्यवस्था के पक्षपाती थे। जैन ग्रन्थ पन्नवणा में देश, जाति, कुल, कर्म, भाषा और शिल्प के आधार पर 5 प्रकार के आर्य बताए गए हैं।

<u>परिवार</u> - परिवार के मुखिया के अधिकारों में वृद्धि हुई। वह अपने पुत्र को संपत्ति के अधिकार से वंचित कर सकता था। सूत्र साहित्य में पिता के द्वारा पुत्र को दे देने या बेच देने का संकेत है।

<u>स्त्रियों की स्थिति</u> - अविवाहित कन्या के लिए पाणिनी ने **कुमार** शब्द का प्रयोग किया है। जिस समय वह विवाह योग्य हो जाती थी, उस समय उसे वर्या कहा जाता है। अपनी इच्छा से पति चुनने वाली कन्या को पतिव्रा कहा जाता था। सामान्यत: स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आयी। दहेज व्यवस्था का प्रचलन शुरू हुआ। स्त्रियाँ पुरुषों के अधीन कर दी गई। उत्तराधिकार में भी उनके साथ भेदभाव बरता जाने लगा। आपस्तम्ब ने उसी दशा में पुत्री को पिता की संपत्ति का

उत्तराधिकारी माना है जब उनका कोई सपिंड उत्तराधिकारी नहीं है। पहली बार **सती प्रथा** का **साहित्यिक साक्ष्य** प्राप्त होता है जब एक ग्रीक लेखक ने उत्तर-पश्चिम में इस प्रथा की चर्चा की है, दूसरी ओर महाभारत में पांडव की पत्नी माद्री के सहगमन की चर्चा है।

<u>दास व्यवस्था</u> - इस काल में दास व्यवस्था प्रचलित थी। **विनय पिटक** में तीन प्रकार के दासों की चर्चा की गई है- 1. घर में दासी से उत्पन्न, 2. युद्ध में बंदी किया हुआ, 3. धन से खरीदा हुआ। दीर्घनिकाय में चौथे प्रकार के दास (स्वेच्छा से दास बनने) की चर्चा की गई है।

इस प्रकार, स्पष्टत: अधिकार आधारित दृष्टिकोण व्यक्ति तथा **समाज** दोनों के ही विकास हेतु कुंजी बनकर उभरता है। इसका कारण यह है कि ऐतिहासिक रूप से जनसाधारण के अधिकारों पर आधारित दृष्टिकोण को राज्यव्यवस्था, **अर्थव्यवस्था** एवं **समाज** कहीं पर भी उचित स्थान नहीं मिला।